P.G. (Sanskrit) Sem. III

CC-X, unit-I

- शङ्कुक के अनुसार रसस्वरूप (नाट्यशास्त्र)

By

Dr. Sanjay Kumar Chaubey

(Assistant professor)

Dept. of Sanskrit

H.D. Jain college, Ara

Scanned by CamScanner

आचार्य शङ्कुक का मत (नाट्यशास्त्र)

नाट्यशास्त्र के रचयिता भरतमुनि के रस निष्पत्ति प्रक्रिया विषय सूत्र —" विभावानुभाव - "... की चार व्याख्याएं उपलब्ध होती हैं। आचार्य भट्टलोल्लट का मत 'उत्पत्तिवाद' श्री शङ्कुक का मत 'अनुमितिवाद' भट्टनायक का मत 'भुक्तिवाद' तथा आचार्य अभिनव गुप्त का मत 'अभिव्यक्ति वाद' के नाम से प्रसिद्ध है।

आचार्य शङ्कुक विभावादि के साथ स्थायी-भाव के संयोग से अनुकर्ता नट में रस की अनुमिति स्वीकार करते हैं। इन्होंने विभावादि तथा रस के मध्य गम्य-गमक भाव सम्बन्ध स्वीकार किया है।

अभिनव में शङ्कुक का मत इस प्रकार उपस्थापित किया गया है —

तस्माद्धेतुभिर्विभावाख्यैः कार्यैश्चानुभावात्मभिः सहचारीरूपैश्च व्यभिचारिभिः, प्रयत्नार्जितया कृत्रिमैरपि तथानभिमन्यमानैरनुकर्तृस्थत्वेन लिङ्गबलतः प्रतीयमानः स्थायीभावो स्थायीभावो मुख्यरामादिगतस्थाय्यनुकरणरूपः।

आचार्य शङ्कुक ने रस की मुख्य रूप से स्थिति रामादि अनुकार्य में स्वीकार की है। वे नट में प्रतीत होनेवाले स्थायिभावों को अनुकरण रूप मानते हैं। न कि वास्तविक। अनुकरण होने के कारण ही ~~अनुकर्ता~~ में इनको रस कहा जाता है —

"अनुकरणरूपत्वादेव च नामान्तरेण व्यपदिष्टो रसः"

इनके अनुसार नट में दिखायी देनेवाले स्थायीभाव के कारण रूप विभाव, कार्यरूप अनुभाव, तथा सहचारी भाव व्यभिचारी भाव वस्तुतः कृत्रिम होते हैं जिन्हे नट द्वारा प्रयत्नपूर्वक उपार्जित किये जाने के कारण सामाजिक कृत्रिम नहीं मानता।

विभाव रसानुभूति कारण रूप ही तथा काव्यबलानुसन्धेय। अनुभाव शिक्षा के द्वारा अर्जित

जाते हैं। व्यभिचारी भाव कृत्रिम अनुभावों द्वारा आक्षेप्य होते हैं परन्तु स्थायीभाव काव्यबल से भी अनुसन्धेय होता है क्योंकि वह वासनात्मक है। इसलिये श्री शंकुक ने नमावाद सिद्धों से रामादिगत स्थायी की नट में अनुमिति स्वीकार की है।

शंकुक के उपर्युक्त सिद्धान्त में ज्ञान की समस्त हेतुभूत सामग्री के मिथ्या होने पर रसादिरूपक अनुभूति की उत्पत्ति सम्भव नहीं मानी जा सकती। अतएव शंकुक इसका समाधान करते हुये लिखते हैं —

अर्थक्रियापि मिथ्याज्ञानाद् द्वारा
मणि: प्रदीप प्रभयोर्मणि बुद्ध्याभि धावतो
मिथ्या ज्ञाना विशेषेऽपि विशेषोऽर्थ: क्रियां प्रति॥

इस दृष्टान्त में मणि प्रभा में मणि भ्रान्ति को मणि लाभरूप अर्थक्रिया की प्राप्ति हो जाने के कारण संवादिभ्रम कहा जाता है। काव्य में भी इसी प्रकार अनुक्रियमाण इत्यादि मिथ्या होने पर भी संवादिभ्रम सदृश हैं क्योंकि इनसे सामाजिक को आनन्दानुभूतिरूप अर्थक्रिया की प्राप्ति होती है।

शंकुक नट में सामाजिक को होनेवाली प्रतीति को इसी आधार पर सम्यक्, मिथ्या, सादृश्य और संशयरूप प्रतीतियों से विलक्षण मानते हैं।

प्रतिभाति न सन्देहो न तत्त्वं न विपर्ययः।
धीरसावयमित्यस्ति नासावेवायमित्यपि॥

आचार्य अभिनवगुप्त शंकुक के इस सिद्धान्त को अपने गुरु भट्टतौत के तर्कों को उपस्थापित करते हैं। इनके अनुसार शंकुक ने अनुकरणरूप इत्यादि को सामाजिक नट, वस्तुतत्त्व के विवेचन व्यासक्त। अथवा भरतमुनि के अनुसार स्वीकार किया है।

सामाजिक के प्रतीति के अभिप्राय से रस को स्थायी का अनुकरणरूप कहना असङ्गत है। क्योंकि किसी प्रमाण से अधिगत पदार्थ का ही

अनुकरण स्वीकार किया जा सकता है अर्थात् अनुकरण उसी वस्तु का किया जा सकता है जो पहले से विद्यमान हो रामादि अविद्यमान हैं। अतः उनका अनुकरण सम्भव नहीं है।

अभिनवगुप्त के अनुसार सामाजिक द्वारा नट के शरीर, अलङ्करण व चेष्टाओं को स्थायीभाव का अनुकरणत्व माना जाना उचित नहीं है क्योंकि ये सभी पदार्थ चक्षुरिन्द्रियग्राह्य हैं। जबकि स्थायीभाव अतीन्द्रिय मन का विषय बनता है। इसके अतिरिक्त भिन्नाधिकरण (भिन्नाश्रय) में विद्यमान होने के कारण भी स्थायीभावों का इन प्रतीतिशीलतादि से भेद है। अतः नटगत किसी भी वस्तु को रस नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त रामादिगत रति अदृष्टपूर्व होने से भी उसका अनुकरण असम्भव है।

.... भिन्नेन्द्रियग्राह्यत्वात्, भिन्नाधिकरणत्वात् ... हेतोरपि वैलक्षण्यात्। ....। न च रामगतां रतिमुपलब्धवान् पूर्विकः केचित् ||